गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल भक्त सधना, पीपा और सैण की वाणी का अध्ययन

गुरू ग्रंथ साहिब सिक्ख धर्म का एक अद्वितीय पावन (sacred) ग्रंथ होने के साथ साथ मध्यकालीन भारत की मूल्यवान साहित्यिक और सांस्कृतिक विरासत का अंग है। आज से तकरीबन चार सौ साल पहले श्री गुरू अरजन देव द्वारा रचे गए इस पावन ग्रंथ की मुख्य विशेषता यह है कि यह सचेत रूप से संकलित और संपादित रचना है। इस में सिक्ख गुरू साहिबान - गुरू नानक देव, गुरू अंगद देव, गुरू अमरदास, गुरू रामदास गुरू अरजन देव और गुरू तेगबहादर जी की वाणी के इलावा भारतीय उप-महाद्वीप के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों, धर्म-समुदायों और जाति-बिरादरियों से संबंधित भक्त कबीर, भक्त नामदेव और भक्त रविदास आदि 15 प्रमुख संतों और बाबा फ़रीद जैसे प्रख्यात सूफी संत की वाणी भी शामिल है जो इसे सर्वभारतीय महत्त्व प्रदान करती है। इस ग्रंथ की संकल्पना के पीछे एक ऐसा मानववादी विश्व-दृष्टिकोण कार्यशील दिखाई देता है जो धार्मिक सहनशीलता और सांस्कृतिक समन्वय की भावना को उजागर करता है और जीवन-विधि की भिन्नताओं का आदर करना सिखाता है। सिक्ख संस्था के अंतर्गत इस पावन ग्रंथ में शामिल समस्त वाणी को गुरबाणी का रुतबा प्राप्त है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि 12वीं सदी ईसवी से ले कर 17वीं सदी ईसवी के विस्तार में फैली हुई इस रचना में मानवीय सरोकारों की समानता दृष्टिगोचर होती है। असल में जीवन, जगत और यथार्थ के बारे इसका यह समान दृष्टिकोण ही इसकी आंतरिक वैचारिक एकता और समस्वरता का द्योतक है जिसके सामने इसके रचित पाठ की सारी क्षेत्रीय, भाषाई और सांस्कृतिक भिन्नताएं सारहीन हो जाती है।

इस पावन ग्रंथ की दूसरी विशेषता यह है कि इसके समूह वाणीकार मध्यकालीन भारत के उन क्रांतिकारी धर्म-प्रवर्तकों में से हैं जिन्हों ने अपने सृजित विमर्श द्वारा धर्म, समाज और संस्कृति के क्षेत्र में नव-जागृति (renaissance) की शक्तिशाली लहर को संगठित करने का प्रयास किया। नव-जागृति की इस लहर को संगठित करने में संतों, भक्तों, सूफियों और सिक्ख गुरुओं का योगदान विशेष तौर पर उल्लेखनीय है। इन मध्यकालीन धर्म-प्रवर्तकों ने अपनी वाणी और कलाम के माध्यम से मानव-मुक्ति और क्रांति का ऐसा संदेश संचारित किया जो सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस लहर ने भारत

के दलित और दमित जन-समूह को एक नई चेतना और नई अस्मिता प्रदान की। समकालीन भारतीय इतिहासकारों ने इस लहर की निशानदेही भक्ति लहर के रूप में की है। सांस्कृतिक नव-जागृति की इस लहर ने धर्म को संकीर्णता-मुक्त आध्यात्मिक अर्थों में परिभाषित करते हुये सांप्रदायिक सद्भाव, मैत्री और सौहार्द्र की भावना को पुष्ट किया। इस के इलावा इस लहर ने तत्कालीन व्यवस्था के दमनकारी तंत्र और प्रचलित रूढिवादी संस्थाओं के मानव-विरोधी किरदार को भी भरपूर चुनौती दी। इसने जाति-प्रथा के हाथों सदियों से पीड़ित जन-समूह के मन में आज़ादी का सपना जगाया। आधुनिक मुहावरे के अनुसार इस पावन ग्रंथ को एक ऐसे मुक्तिदायक विमर्श (liberative discourse) का प्रतीक माना जा सकता है जो तत्कालीन स्थापित व्यवस्था और हाकिम जमात के दमनकारी तंत्र को चुनौती देता है। इस तरह यह लहर दलित और दमित मानवता के अवचेतन में बसी हुई उस आकांक्षा को मूर्तिमान करती है जो दमन और शोषण के ख़िलाफ़ विद्रोह बन कर प्रकट होती है।

प्रस्तुत आलेख का मुख्य प्रयोजन गुरू ग्रंथ साहिब के तीन मुकाबलतन कम-चर्चित भक्तों - सधना, पीपा और सैण - की वाणी का अध्ययन और विश्लेषण करना है। इन भक्त कवियों की वाणी का पाठगत अध्ययन और विश्लेषण करने से पहले इन के जीवन, व्यक्तित्त्व और रचना के बारे में संक्षिप्त परिचय देना उचित प्रतीत होता है। इन तीनों भक्त कवियों के संदर्भ में पहली बात यह है कि इनके जीवन से सम्बंधित बहुत कम जानकारी प्राप्त है। मध्यकालीन हिन्दी और पंजाबी साहित्य के इतिहास-लेखकों - आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, डा. राम कुमार वर्मा, गोबिन्द तृगुणायत, , धर्मपाल सिंघल आदि - और सिक्ख धर्म के कुछ गिने चुने विद्वानों - मैकालिफ, ज्ञानी प्रताप सिंह इत्यादि- ने इन भक्त-कवियों के जीवन से सम्बंधित थोड़ी बहुत जानकारी दी है। इसी के आधार पर हमने इनका संक्षिप्त जीवन-परिचय दिया है जो निम्नांकित है।

भक्त सधना : आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'उत्तरी भारत की संत परम्परा' में भक्त सधना के बारे में लिखा है कि वे बहुत प्राचीन भक्त थे। इनका वर्णन संत नामदेव (1327-1404) ने भी अपनी रचनाओं में किया है। इनके जन्म स्थान का ठीक ठीक पता नहीं चलता। अधिकतर विद्वानों के

अनुसार भक्त सधना का जन्म सिंध प्रांत के सहवन स्थान पर हुआ और देहांत पंजाब में सरहिंद के नज़दीक हुया। अंग्रेज़ विद्वान मैकालिफ ने अपनी पुस्तक 'Sikh Religion' में सधना की नामदेव और ज्ञानदेव के साथ एलोरा गुफा के निकट हुई भेंट के बारे में भी लिखा है। मूलतः सधना दलित वर्ग से सम्बन्धित संत हैं। वे जाति के कसाई माने जाते हैं। कहा जाता है कि वे स्वयं पशुओं की हत्या नहीं करते थे केवल औरों से ले कर मांस बेचते थे।[1] पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला द्वारा प्राकाशित सिक्ख धर्म के विश्वकोष में भक्त सधना के बारे में निम्नाँकित कथन मिलता है :

"**Sadhnaa**, one of the fifteen saints and süfis whose hymns are incorporated in the Guru Granth Sâhib, was a qasãi or butcher by profession who, by his piety and devotion, had gained spiritual eminence. He is believed to have been born at the village of Sehvãn, in Sindh. He was cremated at Sirhind, in the Punjab, where even today a tomb stands in his memory. He is considered to be a contemporary of Nãm Dev, another medieval saint. It is said that Sadhna used Salgram (a stone idol symbolic of Siva) as a weight to weigh the meat he sold. One day an enlightened mendicant passed by, and he chided Sadhna for what he did. Sadhna repented and renounced his home and left for the forests."[2]

सधना जी करुणा, प्रेम और दया की मूर्ति थे। इसी भावना को प्रकट करने वाली अनेकों किंवदन्तियां मिलती हैं। कहा जाता है कि एक बार जब वे जंगल की ओर जा रहे थे तो रास्ते में एक सुन्दर विवाहित स्त्री उनका दिव्य तेज देख कर उन पर आसक्त हो गई। उसने अपने पति को रास्ते का रोड़ा जान कर उसकी हत्या कर दी। उसने सधना जी के पास प्रेम का प्रस्ताव रखा पर सधना जी उसको माता के समान समझते थे। इस प्रकार ठुकराये जाने पर उसने सधना जी पर झूठा इलज़ाम लगा दिया कि उन्हों ने उसके पति की हत्या की है। सधना जी को कारावास में डाल दिया गया और उनके हाथ काट दिये गये। कहा जाता है कि प्रभु-प्रार्थना के फलस्वरूप सधना जी को इस विपदा से छुटकारा प्राप्त हुआ।

---

[1] परशुराम चतुर्वेदी, **उत्तरी भारत की संत परम्परा**, पृ. 97-98.

[2] Harbans Singh (ed.) , Encyclopedia of Sikhism, Punjabi University, Patiala.

सधना जी की वाणी का छह पदों का एक संग्रह 'संत गाथा' में मिलता है।[1] गुरू ग्रंथ साहिब में राग बिलावल के अंतर्गत इनकी वाणी का सिर्फ एक सबद मिलता है जो निम्नाँकित है :

नृप कंनिआ के कारनै इकु भइआ भेखधारी ।

कामारथी सुआरथी वा की पैज सवारी ।1।

तव गुन कहा जगत गुरा जउ करमु न नासै ।

सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जम्बुकु ग्रासै ।1। रहाउ ।

एक बूंद जल कारने चातृकु दुखु पावै ।

प्रान गए सागरु मिलै फुनि कामि न आवै ।2।

प्रान जु थाके थिरु नही कैसे बिरमावउ ।

बूडि मूए नउका मिलै कहु काहि चढावउ ।3।

मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा ।

अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा ।4।1।[2]

सधना जी की वाणी की इन पंक्तियों में प्रभु की परम परात्पर हस्ति के आगे प्रार्थना की मुद्रा में व्यक्त किये गए भाव अंकित हैं। वे कहते हैं कि हे प्रभु! तुम ने 'नृप कंनिआ' (राजकुमारी) के मोह-जाल में 'कामारथी सुआरथी' बने बंदे की लाज रख ली और उसको दुर्गति से बचा लिया। इसी तरह मेरी भी रक्षा करो। किसी व्यक्ति के शेर की शरण में जाने से क्या फायदा जब फिर भी गीदड़ उसे भक्ष कर जाएं। यदि चात्रिक एक बूंद पानी के लिये प्यासा मर जाये तो उसके मरने के बाद जल से भरे सागर का क्या लाभ। इसी तरह किसी व्यक्ति के नदी में डूब जाने के पश्चात अगर नाव मिल भी जाये तो उसकी कोई आवश्यक्ता नहीं रहती। इस सबद का भावार्थ यह है कि मन को विचलित करने वाली निरंकुश कामना के विनाशकारी प्रभाव से बचने का केवल एक ही उपाय है। वह है उस प्रभु की शरण में जाना। 'जम्बुकु' और 'चातृकु' के रूपक (metaphor) भी इसी स्थिति की ओर इशारा करते हैं। कुछेक विद्वानों ने सधना जी की

---

[1] परशुराम चतुर्वेदी, **उत्तरी भारत की संत परम्परा**, पृ. 97-98.

[2] **गुरू ग्रंथ साहिब**, पृ. 858.

वाणी में 'नृप कंनिआ के कारनै' के इस प्रसंग को उनकी जीवनी से सम्बन्धित कर के देखने की कोशिश भी की है जो महज़ एक कल्पना भी हो सकती है। पर इस सबद् का वास्तविक महत्त्व इस बात में निहित है कि यहाँ पारगामी दैवी सत्ता के हवाले से मानव-जीवन के जिस आध्यात्मिक रूपांतरण की बात कही गई है वह सामाजिक और नैतिक दृष्टि से भी सार्थक है।[1]

भक्त सैण : गुरू ग्रंथ साहिब के वाणीकारों में भक्त सैण का नाम भी उल्लेखनीय है। डा. धर्मपाल सिंघल के अनुसार वे संत कबीर, संत रविदास, संत पीपा और संत धंना जी के समकाली और गुरुभाई थे। इन संतों की तरह वे भी संत रामानन्द जी के शिष्य थे। इनका जीवन काल पंद्रहवीं सदी ईसवी माना गया है। वे बंधवगढ (रीवा) के राजा राजाराम के दरबार में नाई थे। भाई गुरदास जी ने भी भक्त सैण का उल्लेख किया है :

सुण परताप कबीर दा दूजा सिख होआ सैण नई।
प्रेम भगति रातीं करै भलके राज दुआरै जाई।
आइे सन्त पराहुणे कीरतन होआ रैण सबाई।
छड न सकै सन्त जन राज दुआर न सेव कमाई।[2]

'भक्तमतल' में भी इसी तरह की एक साखी वर्णित है। एक दिन जब वे राजा की चाकरी करने के लिये जा रहे थे तो रास्ते में उन्हें कुछ साधु मिल गये। वे उनकी सेवा में लग गये और दरबार जाना भूल गये। कहा जाता है कि उन्हें राजा की नाराज़गी और दन्ड से बचाने के लिये किसी संत-पुरुष ने उनका भेस

---

[1] "The whole Shabad conveys this message that the prayer made by a devotee in the court of his Lord should be saturated with devotion and submission otherwise it is just a formality which one observes and we all know fully well that unless the prayer is done from the core of heart with utmost devotion and dedication, it is not accepted in the court of Lord God." **Wikipedia, the free encyclopedia (Internet Resourse)**

[2] **वाराँ भाई गुरदास**, 10.16.

धारण कर के उनकी जगह राज-दरबार में सेवा निभाई। बाद में जब सैण जी ने राजा से क्षमा याचना की तो राजा इस चमत्कार से बहुत प्रभावित हुये। राजा उनके चरनों में गिर पड़े और उनको अपना गुरु धारण कर लिया। इस लोक-प्रचलित साखी में भक्ति भावना द्वारा एक दलित के आध्यात्मक रूपांतरण और नैतिक उत्त्थान का प्रतीकात्मक प्रसंग सामने आता है। भक्त सैण जी ने अपना सारा जीवन प्रभु की भक्ति में लीन रह कर गुज़ारा और आखिरकार 50 वर्ष की आयु में 1440 ईसवी को प्राण त्याग दिये।

गुरू ग्रंथ साहिब में भक्त सैण जी का केवल एक सबद दिया गया है जो इस प्रकार है :

धूप दीप घ्रित साजि आरती । वारने जाउ कमला पती ।1।

मंगला हरि मंगला । नित मंगलु राजा राम राइ को ।1। रहाउ ।

उतमु दीअरा निर्मल बाती । तुही निरंजनु कमला पाती ।2।

रामा भगति रामानंदु जानै । पूरन परमानंदु बखानै ।3।

मदन मूरति भै तारि गोबिंदे । सैनु भणै भजु परमानंदे ।4।2।

इस सबद का मूल भाव इस प्रकार है : मैं धूप, दीप और घृत ले कर आरती सजा रहा हूं और उस प्रभु (कमलापति) के वारने जाता हूं। हे हरि! हे राजन! हे राम! तेरी कृपा दृष्ठि मेरे लिये सदा अनन्द मंगल प्रदान करने वाली है। हे कमलापती! तू निरंजन ही मेरे लिये आरती की दीया वाटी है।जो व्यक्ति उस सर्व-व्यापक परम आनन्द स्वरूप प्रभु का गुनगान करता है वही प्रभु की भक्ति द्वारा प्राप्त होने वाली बरकत से उसके मिलाप का आनन्द प्राप्त करता है । सैण कहता है, हे मेरे मन! उस परम-आनन्द परमात्मा का स्मर्ण कर, जो सुंदर सरूप वाला है, जो मानव को हर तरह से भय-मुक्त करता है और जो समूह सृष्टि की ख़बर-सार लेने वाला है।

इस तरह यह सबद भक्ति भावना की उस मुक्तिदायक और कल्याणकारी शक्ति की ओर संकेत करता है जो तत्कालीन दलित और दमित मानव-समूह को आत्म-सम्मान से जीने की राह दर्शाता है। बेशक इसका मुहावरा मध्यकालीन चेतना-विधि के अनुरूप पराभौतिक माहौल का सृजन करता है परन्तु जब हम इस के रचना-संसार को सांस्कृतिक विमर्श के रूप मे देखते हैं तो इस की नई अर्थ-सार्थकता उजागर हो

उठती है।

भक्त पीपा : पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला द्वारा प्रकाशित सिक्ख धर्म के विश्वकोष[1] में संत पीपा के बारे में लिखा है कि वे जन्म से एक राजकुमार थे परन्तु उन्हों ने अध्यात्म-साधना की खातिर राज-पाट त्याग दिया। पीपा जी का जन्म 1425 ईसवी को राजस्थान के झालावाड़ ज़िले में गाँगरोनगढ के स्थान पर हुआ। वे जाति के राजपूत थे। इनका संबन्ध भी दूसरे कई संतों की तरह संत रामानन्द जी से जोड़ा जाता है। संत पीपा के बारे मे अनेकों किंवदन्तिआँ प्रचलित हैं जो लोक मानस में बसे हुये इनके असाधारण बिम्ब को मूर्तिमान करती हैं। कहा जाता है कि वे भवानी की आराधना करते थे। एक बार देवी इन के सपने में प्रकट हुई और इन्हें काशी जा कर स्वामी रामानन्द जी से दीक्षा प्राप्त करने को कहा। स्वामी रामानन्द जी ने इन के शाहाना वस्त्रों को देख कर इन से मिलने से इनकार कर दिया। इन्हों ने शाही वस्त्रों उतार दिये और सन्यास धारण कर लिया। इस के बाद भी इन्हें कई तरह की कठिन परीक्षाओं में से गुज़रना पड़ा। कुछ अरसा बाद वे द्वारिका चले गये और पास ही के जंगल की एक गुफा में त्याग और तपस्या का जीवन बिताने लगे। बाद में जब इन्हें अध्यात्मिक चेतना का अनुभव हुआ (प्रभु के दीदार के रूप में) तो इन्हों ने मूर्ति-पूजा छोड़ दी और निर्गुण ब्रहम की भक्ति में लीन हो गये।

गुरू ग्रंथ साहिब में संत पीपा जी का केवल एक सबद शामिल है। इसके इलावा पीपा जी के कुछ पदे अन्य स्थानों पर (जैसे पीपा मठ, द्वारिका) भी प्राप्त हैं पर हमारा सरोकार उनकी केवल उसी रचना के साथ है जो इस पावन ग्रंथ में दर्ज है और प्रामाणिक मानी जाती है। इस रचना का पाठ निम्न-अंकित है :

---

[1] "PIPA, one of whose hymns is incorporated in the Guru Granth Sãhib, was a prince who renounced his throne in search of spiritual solace. He was born at Gagaraun, in present-day Jhalawar district of Rajasthãn, about AD 1425. He was a devotee of the goddess Bhavãni whose idol was enshrined in a temple within the premises of his palace. The goddess, it is said, once told him in a dream to visit Kãshi (Vãrãnasi) and receive initiation from Rãmãnand. Pipã went to Kãshi, but Ramãnand refused to see him in his gaudy robes. Pipã cast off his royal apparel and put on a mendicant's garment. He returned home after initiation and began to live like an ascetic." Harbans Singh (ed.) , **Encyclopedia of Sikhism**, Punjabi University, Patiala.

कायउ देवा काइअउ देवल काइअउ जंगम जाती ।

काइअउ धूप दीप नईबेदा काइअउ पूजउ पाती ।1।

काइआ बहु खंड खोजते नव निधि पाई ।

ना कछु आइबो ना कछु जाइबो राम की दुहाई ।1। रहाउ ।

जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै ।

पीपा प्रणवै पर्म ततु है सतिगुरु होइ लखावै ।2।3।

इस रचना का भावार्थ इस प्रकार है : काया अथवा मानव शरीर देवस्थल के समान है, इसी काया में प्रभु का निवास है। दार्शनिक और धार्मिक दृष्टि से यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण कथन है। वास्तव में काया के तीर्थ होने की संकलपना मध्यकालीन भारत की उस विराट वाणी परम्परा का अंग है जिसे सिद्ध-नाथ-संत वाणी परम्परा के नाम से जाना जाता है। इसी काया के भीतर ही प्रभु की आराधना के लिये धूप, दीप और नैवेद् इत्यादि पूजा सामग्री रखी हुई है। पीपा कहते हैं कि मैं ने अनेक दिशाओं में खोज करने के बाद जब अपनी काया के भीतर झाँक कर देखा तो मुझे इसी में नव-निधि की झलक दिखाई दी। वे कहते हैं कि यहाँ आता जाता कुछ भी नहीं है। जो ब्रहमन्ड में है वही पिन्ड में भी है। जो भी उसे खोजता है वह उसे पा लेता है। पीपा प्रार्थना करते हैं कि प्रभु परम तत्त्व है और यह परम तत्त्व अपने को सद्गरू अथवा सच्चे ज्ञान के माध्यम से व्यक्त करता है।

इस विचार चर्चा को समेटते हुये कहा जा सकता है कि गुरू ग्रंथ साहिब में संकलित इन तीनों भक्त कवियों - सधना, सैण और पीपा - की वाणी गुरमत विश्वदृष्टि और विचारधारा की आधारभूत धारणाओं को प्रामाणित करती है। यह मध्यकालीन भारत के उस क्राँतिकारी विमर्श का प्रतिनिधित्व करती है जिस ने स्थापित व्यवस्था के दमनकारी तंत्र को चुनौती देते हुये जन मानस में नैतिक मनोबल पैदा करने का प्रयास किया।